भारत की संघीय व्यवस्था :एक परिचय

Devender Kumar Salwan

परिचय एवं सार

केन्द्र राज्य के मध्य राजस्व के विभाजन के आधारभूत सिद्धान्त है :– कार्य क्षमता, पर्याप्तता तथा उपयुक्तता। इन तीनों उद्धेष्यों की एक साथ ही प्राप्ति अत्यन्त कठिन थी, अतः भारतीय संविधान में समझौते की चेष्टा की गई। संघवाद एक इंद्रधनुष की भांति होता है जहाँ प्रत्येक रंग का अलग अस्तित्व होता है लेकिन ये सभी रंग मिलकर एक सुन्दर और सद्भावपूर्ण दृष्य उपस्थित करते है। संघीय व्यवस्था केन्द्र और राज्यों के बीच संतुलन बनाये रखने का कठिन कार्य करती है कोई भी कानूनी या संस्थानिक फार्मूला संघीय व्यवस्था के सुचारू रूप से कार्य करने की गारंटी नही दे सकता। इसकी सफलता के लिए जनता और राजनीतिक प्रक्रिया को पारस्परिक विष्वास, सहनषीलता तथा सहयोग की भावना एकता और अनेकता दोनों का आदर करता है। अनेकता और विभिन्नताओं को समाप्त कर राष्ट्रीय एकता के लक्ष्य को प्राप्त नहीं किया जा सकता। ऐसी बाधाकारी एकता वास्तव में और ज्यादा सामाजिक संघर्ष तथा अलगाव को जन्म देती है जो अंत में एकता को ही नष्ट कर देती है विभिन्नताओं और स्वायत्तता की मांगों के प्रति संवेदनषील तथा उत्तरदायी राजनीतिक व्यवस्था ही सहयोगी संघवाद का एकमात्र आधार हो सकती है

भारतीय लोकतांत्रिक राजनीति में विषेष रूप से 90 के बाद के दषक में संघवादी प्रवृत्ति में संघीयकरण यानि फेडरलाईजेषन की प्रवृत्ति ही देखी गई है जिसमें हरित संघवाद की भी सुगबुगाहट महसूस की जाने लगी है। संघीय राजनीति को देखने व उसकी प्रवृत्तियों का अवलोकन करने से प्रतीत होता है कि संघीय राजनीति के पीछे संघवाद रूपी शब्दावली कार्य करती है। संघवाद शब्द का प्रयोग समयानुसार भिन्न–भिन्न संदर्भों में किया गया है। वास्तव में शाब्दिक व वैचारिक प्रयोग ने इसके अर्थ को विकृत कर दिया है। सिद्धान्त रूप में, संघवाद राज्य का वह संघटनात्मक स्वरूप है जिसमें किसी समाज में राष्ट्रीय एकता तथा क्षेत्रीय स्वायत्तता के बीच एक संतुलन स्थापित किया जाता है यह एक प्रक्रिया है जिसमें कुछ स्वतंत्र राजनीतिक इकाईयां एक ऐसा प्रबन्ध करती है। जिसमें वे सामान्य समस्याओं के लिए संयुक्त नीतियां बनाकर व संयुक्त निर्णय करके उनका समाधान कर सके।

Published in IJIRMPS (E-ISSN: 2349-7300), Volume 11, Issue 2, March-April 2023

License: Creative Commons Attribution-ShareAlike 4.0 International License

शोध प्रविधि

हमारे संविधान निर्माताओं का लक्ष्य एक विषिष्ट संघीय व्यवस्था की स्थापना करना था। भारत में संघात्मक शासन व्यवस्था –राज्य संबंधों के संदर्भ में एक ऐसी लम्बी ऐतिहासिक प्रक्रिया का परिणाम है जिसका आरम्भ अंग्रेजी शासन काल में हुआ था मार्ले मिंटो सुधार, चेम्स फोर्ड सुधार, साइमन कमीषन रिपोर्ट नेहरू रिपोर्ट तथा 1935 का अधिनियम संघीय प्रक्रिया के प्रारम्भिक चरण थे जिनको आधार बना कर संविधान निर्माताओं ने संघात्मक व्यवस्था को भारतीय स्वरूप प्रदान किया इसमें सारी शक्तियों का विभाजन दो प्रकार की सरकारों के मध्य किया जो केन्द्र सरकार एवं राज्यों की सरकारों के रूप में है।

भारतीय संविधान निर्माताओं ने इस विषय पर गंभीरता से चितंन किया कि संविधान में भारतीय राजनीतिक व्यवस्था का स्वरूप एकात्मक हो या संघात्मक गंभीरतापर्वक विचार करने के पष्चात भारतीय संविधान निर्माताओं ने मध्यम मार्ग को अपनाया जिसके अनुसार आज भारतीय संविधान का बहिरंग संघात्मक ह

संविधान ने संघ सरकार और राज्य सरकारों के बीच शक्तियों का वितरण है संधवाद के इन बहिरंग लक्षणों के बावजूद भारतीय संविधान का प्रधान स्वर एकात्मकता का है।''[4]

शोधकल्पना

वस्तुतः संघवाद का सिद्धान्त सीमित सरकार के सिद्धान्त से संबंधित है राष्ट्रीय सार्वभौमिकता और राज्यों के अधिकारों की प्रथम मांगों में जिस साधन द्वारा समन्वय और एकता स्थापित करता है वह लिखित संविधान जिसके द्वारा सार्वभौमिकता संबंधी शक्तियों का विभाजन केन्द्रीय एवं राज्यों की सरकारों के मध्य किया जाता है। संघवाद का मूल कारण शक्ति विभाजन का सिद्धान्त है भारतीय संघ व्यवस्था के राजनीतिक तत्वों के बदलते परिप्रेक्ष्य में निम्न चार प्रकार से चित्रित किया जा सकता है प्रथम सन् 1950 से 1967 तक केन्द्रीकृत संघवाद कहा जा सकता है द्वितीय सन् 1967 से 1970 तक सहयोगी संघवाद का युग रहा। तृतीय सन् 1970 से 1989 तक 1ध्41977 से 1980 तक को छोड़ कर1ध्2 एकात्मक संघवाद का युग रहा 1 चतुर्थ सन् 1989 से वर्तमान तक भारत में संघ व्यवस्था का सौदेबाजी संघवाद व समान सरकारों वाले राज्यों में सहयोगी संघवाद का प्रतिमान कार्यरत है।

1952–1967 तक का काल निर्देषित संघवाद के रूप में शुमार किया जाता है इसके अन्तर्गत सर्व शक्तिमान अभिजन के हाथ में ही सत्ता की कमान थी कांग्रेस पार्टी 1950 व 1960 के चुनावों में शीर्ष पर थी कांग्रेस पार्टी के संदर्भ में कांग्रेस सिस्टम शब्द भी इजाद किया गया था। इस दौरान प्रधानमंत्री नेहरू का रवैया राज्यों के संदर्भ में सूचनांए मांगते थे वे शक्ति संरचना को सहयोजन के रूप में देखते थे इस रूप में कांग्रेस पार्टी की भूमिका एक पर्यवेक्षक के रूप में थी। चौथे आम चुनाव के पष्चात प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के जिस प्रकार से क्षेत्रीय नेताओं ने समर्थन दिया वह सहयोगी संघवाद की नजीर पेष करती है व 1971 के पाँचवें लोकसभा चुनाव के पष्चात व चुनाव में मिले भारी बहुमत के उपरांत गरीबी हटाओ, 14 बैकों का राष्ट्रीयकरण, महाराजा के प्रिवीयर्स की समाप्ति की घोषणा करके भारतीय संघवाद फिर एकात्मकता की और प्रवृत हो रहा था जून 1975 में 19 महीने के लिए किये गये आंतरिक आपात काल की घोषणा के वक्त भारतीय संघीय ढाचा ढगमगाने लगा था तथा प्रतीत हुआ कि हमारी संस्थानिक भित्ति कितनी कमजोर है। 1990–2014 के बीच के काल में भारतीय राजनीति में गढबंधन सरकारों का रहा, गठबंधन भी राजनीति की परिधि में, मंदिर मंडल व मार्केट की राजनीति धर्णन कर रही थी साथ जैसे ही राज्य सरकारों का कद बढ़ा वे केन्द्र सरकार से प्रत्येक मद्धे पर सौदेबाजी करते हुये प्रतीत हुये। 2014 के आम चुनावों में पूर्ण बहुमत वाले दल भाजपा की सरकार का गठन नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में हुआ है जो कि राज्यों की स्वायत्तता व सहयोग व राज्यों के करों में वद्धि के समर्थन है।

शोध मूल्यांकन

संघीय संविधान राष्ट्रीय प्रभुता तथा राज्य प्रभुता के दावों के बीच जो की ऊपरी दृष्टि से विरोधी जान पड़ती है में सामंजस्य पैदा करने का प्रयत्न करता है संविधान के अन्तरंग में ही कुछ ऐसे उपबंध होते है जो सामंजस्य के तौर तरिकों पर प्रकाष डालते है। केन्द्र व राज्यों की सरकारों के बीच सामंजस्यपूर्ण संबंधो की स्थापना करने वाली संघ प्रणाली को सहयोगी संघवाद की संज्ञा दी जाती है। इस व्यवस्था में संघीय सरकार शक्तिषाली तो होती है किन्तु राज्य सरकारें भी अपने क्षेत्रों में कमजोर नहीं होती। साथ ही दोनों ही सरकारों की एक दूसरे पर निर्भरता इस व्यवस्था का मुख्य लक्षण होता है, संघवाद का बुनियादी तत्व है शक्तियों का विभाजन। सहयोगी संघवाद में शक्तियों के विभाजन के उपरान्त भी केन्द्र व राज्यों के बीच अन्तः क्षेत्रीय सहयोग पर बल दिया जाता है, यह सहयोग केन्द्रीय व प्रादेषिक सरकारों के बीच नहीं अपितु विभिन्न प्रादेषिक सरकारों एवं असंख्य राजनीतिक संस्थानों के मध्य भी दिखलायी देता है। वस्तुतः कोई भी संघीय शासन प्रणाली वाला देष आज यह दावा नहीं कर सकता की वह केन्द्र राज्य मत भेदों की समस्या

से पूर्णतया उन्मुक्त है यथार्थ में संघ व्यवस्था जिसका आधार परस्पर सामंजस्य पूर्ण हिस्सेदारी की भावना है, को तनावों का संस्थाकरण करने वाली व्यवस्था भी कहा जा सकता

केंद्र और राज्य का राजस्व विभाजन

संविधान द्वारा केन्द्र तथा राज्यों के मध्य वित्तीय संबंधों का निरूपण कर निर्धारण, शक्ति का वितरण और करों से प्राप्त आय का विभाजन में निगम कर सीमा शुल्क, निर्यात शुल्क, कृषि भूमि को छोड़कर अन्य सम्पति पर सम्पदा शुल्क, विदेषी ऋण, रेल्वे, रिर्जव बैंक, शेयर बाजार आदि संघ प्रमुख राजस्व स्त्रोत है तथा प्रति व्यक्ति कर, कृषि भूमि कर आदि राज्यों के राजस्व स्त्रोत है। कुछ संघ द्वारा आरोपित तथा संग्रहीत विनियोजित किए जाने वाले शुल्क है तो कुछ संघ द्वारा आरोपित तथा संगृहीत किन्तु राज्यों को सौंपे जाने वाले कर है। सहायक अनुदान तथा अन्य सार्वजनिक उद्धेष्यों के लिए दिया जाने वाला अनुदान ऋण लेने संबंधी उपबंध करों से विमुक्ति। भारत के नियन्त्रक एवं महालेखा परीक्षक द्वारा नियंत्रण वित्तीय संकट काल के रूप में निर्धारित किये गये हैं।

राजस्थान का एकीकरण एवं केन्द्र के साथ संबंध **शोध निष्कर्ष**

स्वतंत्रता के पष्चात आज के राजस्थान के स्वरूप का कार्य सन् 1948 से प्रारम्भ होकर सात चरणों में सरदार बल्लभ भाई पटेल के निर्देषन में 1 नवम्बर 1956 को पूरा हुआ। गठन के समय से ही राजस्थान राज्य के केन्द्र के साथ मधुर संबंध रहे है प्रथम आम चनावों से ही केन्द्र व राजस्थान राज्य में काँग्रेस पार्टी की सरकारों का गठन हुआ था संवैधानिक दृष्टि से मुख्यमंत्री की नियुक्ति राज्यपाल करते है तथा राज्यपाल की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है राज्य में राज्यपाल बहुमत दल के नेता को मुख्यमंत्री पद के लिए आमन्त्रित करते है। 1950 से 1967 तक के काल को **केन्द्रीकृत संघवाद** कहा जा सकता है। राजस्थान प्रदेष की राजनीति में पहली बार 1967 में 183 सदस्यीय सदन में कांग्रेस दल को 88 स्थान प्राप्त हुए और संयुक्त मोर्चे की संख्या 93 सदस्यों की थी। राज्यपाल ने मोर्चे के साथ निर्दलीय सदस्यों की उपेक्षा करते हुए श्री मोहन लाल सुखाड़िया को मन्त्रिमडंल के गठन हेतु आमंत्रित किया काँग्रेस दल में मुख्यमंत्रियों के लिए हाईकमान का
मामलों में केन्द्रीय सरकार की दखलन्दाजी कम हो तथा संविधान द्वारा प्रदत विषयों पर उन्हें निरपेक्ष सत्ता प्रयोग करने का अधिकार हो। वहीं कमजोर केन्द्र बिखराव को प्रोत्साहित करता है और कमजोर राज्यों के कारण केन्द्र में निरकुंष प्रवृत्तियों के उभरने का खतरा भी है। राष्ट्रीय एकता एवं सुरक्षा की दृष्टि से केन्द्र के सषक्त होने की आवष्यकता निर्विवाद है तो जनहितकारी कार्यों के विस्तार तथा सेवाओं को क्षमतावान बनाने के लिए राज्यों की साधिकारिता भी तर्क संगत ठहरती है। भारत की संघात्मक व्यवस्था और केन्द्र राज्य संबंधों का सर्वाधिक प्रमुख तथ्य यह है कि राज्यों का सषक्त बनाने का अर्थ केन्द्र को अषक्त बनाना नहीं है और केन्द्र राज्य संबंधो की कोई ऐसी समस्या नहीं है जो संविधान के वर्तमान ढ़ाचे में हल न की जा सकें। बदलते वैष्विक परिदृष्य में जलवायु परिर्वतन, जैव विविधता जल प्रदूषण, वनों की कटाई, ओजोन परत का क्षय जैसी समस्याओं के आसपास संघवाद के ढ़ाचें में हारित संघवाद को शामिल करके इसे और अधिक सुदृढ़ करने पर बल दिया जा रहा है।[1]

संदर्भ सूची

- राजस्थान और केंद्र सरकार समीक्षा 2019/2020/2021
- नीति आयोग रिपोर्ट 2019 -20
- भारत की राजनीति राजीव महर्षि 2018 प्रकाशन
- राजनीतिक उचित एवं शासन 2002